



Neutral Citation No. - 2026:AHC-

LKO:21976

सुरक्षित किया गया 04.02.2026

प्रदत्त किया गया 30.04.2026

उच्च न्यायालय इलाहाबाद, लखनऊ

दांडिक अपील संख्या.- 831/2005

मंगली एवं 2 अन्य

..... अपीलार्थी(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रतिवादी(गण)

अपीलार्थी(गण) के अधिवक्ता

:- शिशिर प्रधान

प्रतिवादी(गण) के अधिवक्ता

:- शासकीय अधिवक्ता

न्यायालय संख्या. - 23

माननीय न्यायमूर्ति प्रमोद कुमार श्रीवास्तव

1. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य की ओर से विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता को सुना गया।

2. वर्तमान दांडिक अपील दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374(2) के अंतर्गत, आक्षेपित निर्णय एवं आदेश दिनांक 20.05.2005 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसे अपर सत्र

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 7, रायबरेली द्वारा सत्र विचारण संख्या 387/2003 (वाद अपराध संख्या 225/2001), भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 304/34, 323/34, 504 एवं 506, थाना बचरावन, जनपद रायबरेली में पारित किया गया है, जिसके द्वारा अपीलकर्ताओं मंगली, मैकू लाल एवं बुद्धि लाल को दोषसिद्ध करते हुए प्रत्येक को 10 वर्ष के कठोर कारावास एवं ₹5,000/- के अर्थदंड से दंडित किया गया है।

3. मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि दिनांक 05.07.2001 को रात्रि लगभग 10-11 बजे, पंपिंग सेट के वितरण और बिक्री को लेकर परिवादी राम लखन और अभियुक्तों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ था। इस संबंध में, वे एक बिंदु पर सहमत नहीं थे। तब अभियुक्तों ने परिवादी को गालियां दीं। उस समय, अभियुक्त मंगली और बुद्धी लाल अपने हाथों में लाठी लेकर, अभियुक्त मैकू लाल लोहे की सरिया और अभियुक्त राम दुलारे छोटी कुल्हाड़ी लेकर राम लखन के दरवाजे पर इकट्ठा हुए और उस पर प्रहार किया। जब स्थिति गंभीर हो गई, तो मुखबिर की पत्नी परमेश्वरी और उसका बेटा राम प्रकाश बीच-बचाव करने पहुंचे, परंतु अभियुक्तों ने उन पर भी प्रहार कर दिया। शोर-शराबा सुनकर ग्रामीण राम अवतार, गौरे और अन्य वहां पहुंच गए; तब अभियुक्तगण मुखबिर और अन्य लोगों को जान से मारने की धमकी देते हुए, वहां से भाग निकले।

4. विवेचना अधिकारी ने विवेचना के दौरान घटनास्थल का निरीक्षण किया, नजरी नक्शा तैयार किया और गवाहों के बयान भी अभिलेखित किया। विवेचना पूर्ण होने के उपरांत, थाना बछरावां, जिला रायबरेली में अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304, 323, 504 और 506 के अंतर्गत आरोप-पत्र भी दाखिल किया गया।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

5. विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों-मंगली, मैकू लाल और बुद्धी लाल-के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 304/34, 323/34, 504 और 506 के अंतर्गत आरोप विरचित किए। अभियुक्तों ने अपने ऊपर लगाए गए आरोपों से इनकार किया एवं विचारण की मांग की।
6. अपने मामले को सिद्ध करने के लिए, अभियोजन पक्ष ने कई गवाहों का परीक्षण किया, जिनमें मुख्य प्रत्यक्षदर्शी एवं परिवादी श्रीमती परमेश्वरी, (अभियोजन साक्षी-1) राम लखन, (अभियोजन साक्षी-2) और डॉ. पी.के. सिंह (अभियोजन साक्षी-5) शामिल थे, जिन्होंने घायलों की चिकित्सीय जांच की थी। अभियोजन पक्ष द्वारा दाखिल दस्तावेजी साक्ष्यों में तहरीर (प्रदर्श क-1), चिक प्रथम सूचना रिपोर्ट (प्रदर्श क-2), शव परीक्षण आख्या (प्रदर्श क-4) एवं नजरी नक्शा (प्रदर्श क-5) शामिल थी।
7. अभियोजन साक्ष्य की समाप्ति के पश्चात, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत अभियुक्तों/अपीलकर्ताओं के बयान अभिलेखित किए गए। विचारण न्यायालय ने उनके विरुद्ध आए दोषारोपकारी साक्ष्यों के बारे में उन्हें समझाया, जिससे अपीलकर्ताओं ने इनकार किया और यह तर्क दिया कि उन्हें नल कूप/बोरिंग के पैसे के वितरण और गांव में रास्ते के निर्माण को लेकर हुए विवाद के कारण झूठा फंसाया गया है।
8. तत्पश्चात, विद्वान विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं को सुनने और मौखिक तथा दस्तावेजी साक्ष्यों का परिशीलन करने के पश्चात अपीलकर्ताओं को दोषी पाया। न्यायालय ने मंगली, मैकू लाल और बुद्धी लाल को भारतीय दंड संहिता की धारा 304/34 के अंतर्गत (उन्हें 7 वर्ष के कठोर कारावास और प्रत्येक को 2,000/- रुपये के जुर्माने की सजा सुनाई) साथ ही भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 504 और 506 के अंतर्गत भी दोषसिद्ध किया।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

9. आक्षेपित निर्णय एवं दोषसिद्धि आदेश दिनांक 20.05.2005 से व्यथित और असंतुष्ट होकर, अभियुक्त-अपीलकर्ताओं ने इस न्यायालय के समक्ष वर्तमान अपील प्रस्तुत की है।

10. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि विद्वान विचारण न्यायालय अभियुक्तों को आई चोटों पर विचार करने में विफल रहा है, जिन्हें पुलिस स्टेशन में मजरूबी चिट्ठी के माध्यम से प्रलेखित किया गया था। यह भी प्रस्तुत किया गया है कि अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में विफल रहा कि अपीलकर्ताओं ने भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के अंतर्गत मृतक की हत्या के लिए कोई समान आशय साझा किया था। अभिलेख से संकेत मिलता है कि कुल्हाड़ी से किया गया घातक प्रहार अभियोजन पक्ष के गवाहों द्वारा विशेष रूप से सह-अभियुक्त राम दुलारे पर आरोपित किया गया था, जिसकी विचारण के दौरान मृत्यु हो जाने के कारण कार्यवाही उपशमिता हो गई थी। इसके अतिरिक्त, इस अपील के लंबित रहने के दौरान, अपीलकर्ता संख्या-1 मंगली की भी मृत्यु हो गई है, जिससे अब अपील केवल अपीलकर्ता मैकू लाल और बुद्धी लाल के लिए ही शेष है। अभियोजन पक्ष के स्वयं के मामले के अनुसार, मैकू लाल 'सरिया' (लोहे की छड़) से और बुद्धी लाल 'लाठी' से युक्त था। हालांकि, चिकित्सक के बयान और शव परीक्षण आख्या सहित चिकित्सीय साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि मृत्यु का कारण बनने वाली मृत्युपूर्व सिर की चोटें उन हथियारों के अनुरूप नहीं थीं जो कथित तौर पर इन दो जीवित अपीलकर्ताओं के पास थे। यह भी तर्क दिया गया है कि घटना नल कूप/बोरिंग के पैसे के विवाद को लेकर अचानक हुए संघर्ष के दौरान तत्काल आवेश में हुई थी, जिसमें पहले से कोई योजना या पूर्व शत्रुता नहीं थी। चूंकि अभियोजन पक्ष अभियुक्त पक्ष को आई कई चोटों को स्पष्ट करने में विफल रहा-जिन्हें अभियोजन पक्ष ने उसी दिन घटित होना स्वीकार किया था-इस प्रकार, विचारण न्यायालय के निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण हैं, तथा भारतीय दंड

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संहिता की धारा 304 के अंतर्गत अपराध का मामला जीवित अपीलकर्ताओं के विरुद्ध नहीं बनता है।

11. इसके विपरीत, विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने पुरजोर तर्क दिया कि अभियोजन पक्ष ने विचारण न्यायालय के समक्ष पर्याप्त और निर्णयात्मक साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं, जिससे उसका मामला संदेह से परे सिद्ध होता है। उन्होंने आगे यह प्रस्तुत किया कि अन्य सह-अभियुक्तों के साथ मिलकर कार्य करने में अपीलकर्ताओं की भूमिका अभिलेख पर स्पष्ट रूप से स्थापित है। साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि अपराध करने का सामान्य आशय हमले के समय प्रकट हुआ था। अभियुक्तों ने, जो कुल्हाड़ी और सरिया (लोहे की छड़) जैसे घातक हथियारों से युक्त थे, मृतक राम दुलारे पर घातक प्रहार किए थे।

12. विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के अंतर्गत सामान्य आशय घटनास्थल पर स्वतः विकसित हो सकता है और इसके लिए पहले से योजना बनाने या मस्तिष्क के पूर्व मिलन की आवश्यकता नहीं है। इसके अलावा, उन्होंने प्रस्तुत किया कि अभियुक्त पक्ष को आई कथित चोटें प्रकृति में सतही थीं; ऐसी मामूली चोटों का स्पष्टीकरण न देना अभियोजन पक्ष के मामले को अविश्वसनीय नहीं बनाता है। विचारण न्यायालय के इस निष्कर्ष पर प्रकाश डालते हुए कि अपीलकर्ता ही हमलावर थे, उन्होंने यह कायम रखा कि निर्णय मामले के तथ्यों, साक्ष्यों और परिस्थितियों के पूर्ण अनुरूप है। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि आक्षेपित निर्णय में कोई विधिक त्रुटि अथवा विकृति परिलक्षित नहीं होती है तथा वर्तमान अपील, किसी भी प्रकार के गुण-दोष से रहित होने के कारण, निरस्त किए जाने योग्य है।

13. मैंने दोनों पक्षों द्वारा उठाए गए प्रतिद्वंद्वी तर्कों एवं अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर विचार किया है। प्रथम सूचना रिपोर्ट (वाद अपराध संख्या 225/2001) यह स्पष्ट करती है कि

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अभियुक्तगण-मंगली और बुद्धी लाल लाठियों से; मैकू लाल सरिया से; और राम दुलारे छोटी कुल्हाड़ी से युक्त होकर-परिवादी के दरवाजे पर पहुंचे और मृतक पर घातक प्रहार किया। यह आरोप है कि उन्होंने अपशब्द कहे और राम लखन के साथ मारपीट भी की; जब परिवादी परमेश्वरी और उनके बेटे राम प्रकाश ने बीच-बचाव करने का प्रयास किया, तो अपीलकर्ताओं ने उन पर भी प्रहार किया।

14. अपने साक्ष्य में, मृतक की पत्नी परमेश्वरी (अभियोजन साक्षी-1) ने प्रथम सूचना रिपोर्ट में बताए गए तथ्यों को दोहराया है। हालांकि, प्रति-प्रतीक्षा के दौरान (साक्ष्य के पृष्ठ 16 पर टिप्पणी के अनुसार), उन्होंने बताया कि घटना रात 10:00 बजे से 11:00 बजे के बीच हुई थी, किन्तु वह प्रकाश के किसी विशिष्ट स्रोत का खुलासा करने में विफल रही हैं। इसके अतिरिक्त, उन्होंने दावा किया कि हमलावरों की संख्या नौ थी और वे लाठी, सरिया और कुल्हाड़ी से युक्त थे, जिनमें से सभी ने कथित तौर पर मृतक पर प्रहार किया था। साक्ष्य के पृष्ठ 17 पर, उन्होंने अपने पक्ष द्वारा अभियुक्त पक्ष को पहुंचाई गई चोटों से स्पष्ट रूप से इनकार किया। उन्होंने अभियुक्तों को विशिष्ट भूमिकाएँ भी सौंपीं, जिसमें कहा गया कि राम दुलारे ने उन पर प्रहार किया और राम लखन के शरीर पर कुल्हाड़ी से वार किया गया था। उन्होंने गवाही दी कि सिर पर कुल्हाड़ी से चार गहरे घाव किए गए थे। एक प्रत्यक्षदर्शी के रूप में परिवादी द्वारा दिया गया यह विवरण, विशेष रूप से राम दुलारे की पहचान उस व्यक्ति के रूप में करता है जिसने मृतक के सिर पर कुल्हाड़ी से हमला किया था। यह उल्लेख करना भी समीचीन है कि दोनों पक्ष निकट संबंधी हैं, और विवाद की जड़ पंपिंग सेट/बोरिंग मशीन की बिक्री से प्राप्त धन के वितरण को लेकर असहमति संबन्धित थी।

15. राम प्रकाश (अभियोजन साक्षी-2), जो मृतक का पुत्र है, ने गवाही दी कि जब उसके पिता, राम लखन, चारपाई पर बैठे थे, तब सह-अभियुक्त राम दुलारे (जिसकी विचारण के

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

दौरान मृत्यु हो गई) ने राम लखन के सिर पर कुल्हाड़ी से हमला किया। इससे राम लखन जमीन पर गिर गए, जिसके बाद राम दुलारे ने उनके सिर पर 3-4 और कुल्हाड़ी से हमले किए। साक्षी ने वर्तमान अपीलकर्ताओं को विशिष्ट भूमिकाएं सौंपीं, जिसमें कहा गया कि मैकू लाल (मकू) ने मृतक को सरिया (लोहे की छड़) से मारा और बुद्धी लाल ने लाठी का प्रयोग किया। डॉ. एल.एस. महमूद (अभियोजन साक्षी-5), जिन्होंने शव का परीक्षण किया था, के चिकित्सीय साक्ष्य के अनुसार, आंतरिक परीक्षण में खोपड़ी की दाहिनी पार्श्व हड्डी में अस्थि भंग पाया गया। डॉ. महमूद ने स्पष्ट रूप से राय दी कि राम लखन की मृत्यु इन मृत्युपूर्व सिर की चोटों के परिणामस्वरूप कोमा में जाने के कारण हुई थी।

16. साक्ष्य यह संकेत देते हैं कि यद्यपि घातक प्रहारों का कारण कुल्हाड़ी का प्रयोग बताया गया था, किंतु वर्तमान अपीलकर्ताओं ने भी उस विवाद में भाग लिया था। दोनों पक्ष एक-दूसरे के निकट रहते हैं और करीबी रिश्तेदार भी हैं; विवाद की जड़ एक पंपिंग सेट (बोरिंग) की बिक्री से प्राप्त धन के वितरण को लेकर असहमति से संबन्धित थी। परिस्थितियाँ एक आकस्मिक जमावड़े का संकेत देती हैं जहाँ कहा-सुनी और आपसी गाली-गलौज एक शारीरिक संघर्ष में बदल गई। विशेष रूप से, अभियुक्त पक्ष के सदस्यों को भी कई चोटें आई थीं, जैसा कि विशेष रूप से, अपीलकर्ता संख्या-1 मंगली को चेहरे/माथे के बाईं ओर एक कटा हुआ घाव हुआ था और उसने आंतरिक दर्द की शिकायत की थी, जैसा कि मजरूबी चिट्ठी के माध्यम से तैयार की गई चोट रिपोर्ट में दर्ज है, अपीलकर्ता संख्या-2 मैकू लाल को कुल 8 चोटें आई थीं, जिनमें मुख्य रूप से सिर और शरीर के पिछले हिस्सों पर नील और खरोंचयुक्त नील शामिल थे, और अपीलकर्ता संख्या-3 बुद्धी लाल को सिर पर चोट आई थी, जिसके लिए परीक्षण करने वाले चिकित्सक ने अस्थि भंग की संभावना की जांच हेतु एक्स-रे की सलाह दी थी। हालाँकि अभियोजन पक्ष ने स्वीकार किया कि ये चोटें उसी घटना के दौरान लगी थीं, किंतु वे इस बात

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

का पर्याप्त स्पष्टीकरण देने में विफल रहे कि अभियुक्तों को ये चोटें किस प्रकार लगीं, जिससे अभियोजन पक्ष के उस संस्करण पर संदेह उत्पन्न होता है जिसमें उन्हें एकमात्र हमलावर बताया गया था, और इस संबंध में दिया गया निष्कर्ष भी त्रुटिपूर्ण है।

17. दिए गए तथ्यों, साक्ष्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, यह स्पष्ट है कि पक्षों के बीच अचानक और आवेश में एक स्वतंत्र संघर्ष हुआ था। ऐसी स्थिति में, उसमें शामिल व्यक्ति अपने व्यक्तिगत कार्यों के लिए, न कि दूसरों के कार्यों के लिए प्रतिनिधिक रूप से उत्तरदायी होंगे। यह विधि पुंडलिक महादु भान और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य: (1998) SCC (दांडिक) 202 के मामले में प्रतिपादित की गयी है। इस निर्णय में, लालजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: (1974) 3 SCC 295 और ईश्वर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य: (1976) 4 SCC 355 के मामलों में निर्धारित विधि पर विश्वास जताया गया। यह कहा गया था कि अचानक और स्वतंत्र संघर्ष के मामले में, शामिल प्रत्येक व्यक्ति को केवल उसके व्यक्तिगत कार्य के लिए न कि दूसरों के कार्यों के लिए प्रतिनिधिक रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है।

"6. संपूर्ण अभिलेख का अध्ययन करने के पश्चात, हमारा यह मत है कि नीचे की विद्वान न्यायालयों के उपरोक्त समवर्ती निष्कर्ष मुख्य रूप से सही हैं और साक्ष्यों के उचित मूल्यांकन पर आधारित हैं। किंतु, ऐसे निष्कर्ष दर्ज करने के बाद, विद्वान निचली न्यायालयों का अपीलकर्ताओं को दंगा करने के लिए दोषी ठहराना न्यायोचित नहीं था, क्योंकि अब यह विधितः भली-भांति स्थापित हो चुका है कि अचानक और स्वतंत्र संघर्ष के मामले में, उसमें शामिल प्रत्येक व्यक्ति को उसके व्यक्तिगत कार्य के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, न कि दूसरों के कार्यों के लिए प्रतिनिधिक रूप से उत्तरदायी। (लालजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और ईश्वर सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य)। अतः, दो जीवित अपीलकर्ताओं की

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

भारतीय दंड संहिता की धारा 148 के अंतर्गत दोषसिद्धि को बरकरार नहीं रखा जा सकता है।"

18. इसके अतिरिक्त, दर्शन सिंह एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य: (2009) 16 SCC 290 के मामले में, न्यायालय ने जय भगवान बनाम हरियाणा राज्य: (1999) 3 SCC 102 में दिए गए निर्णय पर विश्वास जताया गया, जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के लागू होने के सिद्धांतों को निर्धारित किया गया था। प्रासंगिक प्रस्तर 7, 8 और 10 को नीचे उद्धृत किया गया है:

"7. जय भगवान बनाम हरियाणा राज्य [(1999) 3 SCC 102] के मामले में, इस न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 34 को लागू करने के सिद्धांत को निम्नानुसार निर्धारित किया है: (SCC पृ. 107, प्रस्तर 10)

'10. भारतीय दंड संहिता की धारा 34 लागू करने के लिए, दो या दो से अधिक अभियुक्त होने के तथ्य के अलावा, दो कारकों का स्थापित होना आवश्यक है: (i) सामान्य आशय, और (ii) अपराध कारित करने में अभियुक्त की भागीदारी। यदि सामान्य आशय सिद्ध हो जाता है किन्तु व्यक्तिगत अभियुक्त को कोई प्रत्यक्ष कृत्य नहीं सौंपा गया है, तो धारा 34 आकर्षित होगी क्योंकि इसमें अनिवार्य रूप से प्रतिनिधिक दायित्व शामिल है; किन्तु यदि अपराध में अभियुक्त की भागीदारी सिद्ध हो जाती है और सामान्य आशय अनुपस्थित है, तो धारा 34 का सहारा नहीं लिया जा सकता। हर मामले में सामान्य आशय का प्रत्यक्ष साक्ष्य होना संभव नहीं है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

इसका निष्कर्ष प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से निकाला जाना चाहिए।"

8. इस मामले के तथ्यों पर भारतीय दंड संहिता की धारा 34 लागू करने के लिए, सामान्य आशय का कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य नहीं है। ऊपर बताए गए तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, यह न तो सुरक्षित है और न ही संभव कि यह निष्कर्ष निकाला जाए कि अपीलकर्ताओं का अभियोजन साक्षी-5 या उनकी मृतक पत्नी को मारने का सामान्य आशय था। ऐसे मामले में, उन्हें उनके व्यक्तिगत कृत्यों के आधार पर ही दोषी ठहराया जाना होगा।..

10. जहाँ तक अपीलकर्ता संख्या 2 और 3 का संबंध है, ऐसा कोई भी साक्ष्य मौजूद नहीं है जो यह दर्शाए कि उनका मृतक राजिंदर कौर या उनके पति अभियोजन साक्षी.5 की हत्या करने या अभियोजन साक्षी 4 की हत्या का प्रयास करने का सामान्य आशय था। सामान्य आशय की अनुपस्थिति में, अपीलकर्ता 2 और 3 को राजिंदर कौर की हत्या या अभियोजन साक्षी 4 की हत्या के प्रयास का दोषी नहीं ठहराया जा सकता था। उन्होंने अभियोजन साक्षी 4 पर लाठियों से साधारण चोटें पहुंचाई थीं। अभियोजन साक्षी 3 द्वारा उन चोटों को प्रकृति में साधारण बताया गया था। इन कारणों से, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 307 के साथ पठित धारा 34 के अंतर्गत अपीलकर्ता 2 और 3 की दोषसिद्धि को बरकरार नहीं रखा जा सकता है; अतः इसे अपास्त किया जाता है। हालाँकि, भारतीय दंड संहिता की धारा 323 के अंतर्गत उनकी दोषसिद्धि और अभियोजन साक्षी 5 को चोट पहुंचाने के लिए विचारण न्यायालय द्वारा दर्ज की गई उनकी परिवीक्षा पर रिहाई को बहाल किया जाता है।"

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

19. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के आलोक में, वर्तमान मामला यह दर्शाता है कि इस बात का कोई पुख्ता सबूत नहीं है कि अभियुक्त-अपीलकर्ताओं का मृतक राम दुलारे की हत्या करने का कोई सामान्य आशय था। चूंकि मृतक के शरीर पर पाई गई चोटें, सिर की चोट को छोड़कर, प्रकृति में सामान्य थीं, इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 34 सह पठित धारा 304 के अंतर्गत वर्तमान अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्षों को धारणीय नहीं रखा जा सकता है, इसलिए, उन्हें निरस्त किया जाना चाहिए। हालांकि, भारतीय दंड संहिता की धारा 323 और 504 के संबंध में दिए गए निष्कर्षों को कायम रखा जा सकता है।

20. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि उत्तर प्रदेश राज्य की अपनी स्वयं की परिवीक्षा संबंधी स्थानीय विधि है, अर्थात् उत्तर प्रदेश प्रथम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1938। उन्होंने आगे यह प्रस्तुत किया कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 (केंद्रीय अधिनियम) (इसके पश्चात् जिसे 1958 के अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है) भी उत्तर प्रदेश राज्य में लागू है, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **मोहम्मद हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य; (2017) 2 SCC 198** के मामले में निर्धारित किया गया है। इस प्रकार, अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया है कि दोनों में से किसी भी अधिनियम के अंतर्गत लाभ प्रदान करना न्यायालय के विवेक पर निर्भर करता है।

21. अपीलकर्ताओं के विद्वान अधिवक्ता ने यह तर्क दिया कि घटना 5 जुलाई, 2001 को घटित हुई थी, जो कि लगभग 24 वर्ष पूर्व की है, और उस समय से अपीलकर्ताओं के विरुद्ध कोई भी आपराधिक इतिहास दर्ज नहीं है। यह तर्क दिया गया कि विचारण और उसके पश्चात् अपील प्रक्रिया में अत्यधिक विलंब ने अपीलकर्ताओं के त्वरित विचारण के अधिकार को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। अधिवक्ता ने आगे इस बात पर बल दिया कि अपीलकर्ता प्रथम

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अपराधी हैं और किसी अन्य मामले में उनका कोई पिछला दोषसिद्धि अभिलेख नहीं है। फलस्वरूप, यह प्रार्थना की गई कि न्यायालय अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 के अंतर्गत लाभ प्रदान करने पर विचार करे, जिससे अपीलकर्ताओं को तत्काल कारावास की सजा देने के बजाय सदाचार की परिवीक्षा पर रिहा होने का लाभ मिल सके।

22. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अपर शासकीय अधिवक्ता ने अपील का पुरजोर विरोध किया और यह तर्क दिया कि आक्षेपित निर्णय में कोई भी तात्त्विक अनियमितता या अवैधता नहीं है। उन्होंने आगे यह तर्क दिया कि विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद चक्षुदर्शी और चिकित्सीय साक्ष्यों के गहन मूल्यांकन के पश्चात्, अभियुक्त-अपीलकर्ताओं को सही ढंग से दोषी ठहराया है। इस बात पर बल दिया गया कि श्रीमती परमेश्वरी (अभियोजन साक्षी-1) और राम लखन (अभियोजन साक्षी -2) सहित चक्षुदर्शी साक्षियों की गवाही अपीलकर्ताओं की संलिप्तता के संबंध में सुसंगत रही है, और इस नाते, दोषसिद्धि में इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

23. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने से पूर्व, परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धाराएँ 3 एवं 4 उद्धृत करना समीचीन होगा:

“3. कतिपय अपराधियों को भर्त्सना के पश्चात् छोड़ देने की न्यायालय की शक्ति-

जब कोई व्यक्ति भारतीय दण्ड संहिता, (1860 का 45) की धारा 379 या धारा 380 या धारा 381 या धारा 404 या धारा 420 के अधीन दण्डनीय कोई अपराध अथवा भारतीय दण्ड संहिता या किसी अन्य विधि के अधीन दो वर्ष से अनधिक के लिए कारावास या जुर्माने अथवा दोनों से दण्डनीय कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है और उसके विरुद्ध कोई पूर्व दोषसिद्धि साबित नहीं होती है और जिस न्यायालय ने उस व्यक्ति को दोषी पाया है उसकी यह राय है कि मामले

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

की परिस्थितियों को, जिनके अंतर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है ध्यान रखते हुए ऐसा करना समीचीन है जब तब तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी वह न्यायालय उसे दंडित करने या उसे धारा 4 के अधीन सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ने के बजाय उसे सम्यक् भर्त्सना के पश्चात् छोड़ सकेगा ।

स्पष्टीकरण- इस धारा के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति के विरुद्ध पूर्व दोषसिद्धि के अन्तर्गत इस धारा या धारा 4 के अधीन उसके विरुद्ध किया गया कोई पूर्व आदेश भी है।

4. कतिपय अपराधियों को सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ने की न्यायालय की शक्ति-(1) जब कोई व्यक्ति ऐसा कोई अपराध करने का दोषी पाया जाता है जो मृत्यु या आजीवन कारावास से दण्डनीय नहीं है और जिस न्यायालय ने उस व्यक्ति को दोषी पाया है उसकी यह राय है कि मामले की परिस्थितियों को जिनके अन्तर्गत अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र भी है, ध्यान में रखते हुए उसे सदाचरण की परिवीक्षा पर छोड़ देना समीचीन हो तब तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी वह न्यायालय उसे तुरन्त दंडित करने के बजाय, निदेश दे सकेगा कि उसे, प्रतिभुओं के सहित या उनके बिना, उसके द्वारा ऐसा बंधपत्र देने पर छोड़ दिया जाए कि वह तीन वर्ष से अनधिक की ऐसी कालावधि के दौरान, जैसी न्यायालय निर्दिष्ट करे, आहूत किए जाने पर उपस्थित होगा और दण्डादेश प्राप्त करेगा और इस बीच परिशान्ति कायम रखेगा और सदाचारी रहेगा:

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

परन्तु न्यायालय किसी अपराधी के ऐसे छोड़ दिए जाने का निदेश तब तक नहीं देगा जब तक उसका समाधान नहीं हो जाता कि अपराधी या उसके प्रतिभू का, यदि कोई हो, नियत निवास स्थान या उस स्थान में नियमित उपजीविका है, जिस पर वह न्यायालय अधिकारिता का प्रयोग करता है या जिसमें अपराधी के उस कालावधि के दौरान रहने की संभाव्यता है जिसके लिए वह बंधपत्र देता है।”

24. 1958 के अधिनियम की धारा 4 वहाँ लागू होती है जहाँ कोई व्यक्ति ऐसा अपराध करने का दोषी पाया जाता है जिसकी सजा न तो आजीवन कारावास है और न ही मृत्युदंड। न्यायालय ऐसे अभियुक्त को धारा में उल्लिखित बंधपत्र भरने पर सदाचार की परीक्षा पर रिहा कर सकता है। इस धारा के प्रावधानों को लागू करते समय, न्यायालय के लिए यह भी आवश्यक है कि वह अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने से पूर्व मामले की परिस्थितियों, अपराधी के चरित्र और अपराध की प्रकृति पर विचार करे।

25. जहाँ तक अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा 1958 के अधिनियम की धारा 4 के लाभ प्रदान करने की प्रार्थना का संबंध है, इस विषय में विधिक स्थिति और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि पर चर्चा करना अनिवार्य है।

26. माननीय उच्चतम न्यायालय ने रतन लाल बनाम पंजाब राज्य, AIR 1965 SC 444 के मामले में, अपराधी परीक्षा अधिनियम, 1958 के उद्देश्य और प्रयोजन पर चर्चा करते हुए, प्रस्तर संख्या 4 में निम्नानुसार टिप्पणी की है:-

“4. यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार की आधुनिक उदार प्रवृत्ति की प्रगति में एक मील का पत्थर है। यह उस सिद्धांत की मान्यता का परिणाम है कि आपराधिक विधि का उद्देश्य व्यक्तिगत अपराधी को दंडित करने की तुलना में उसमें सुधार करना अधिक है। व्यापक रूप से कहा जाए तो, यह अधिनियम

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों और उससे अधिक आयु के अपराधियों, तथा मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध के दोषियों और कम गंभीर अपराध के दोषियों के बीच अंतर करता है। जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को अधिनियम के उपयुक्त प्रावधानों में निहित शर्तों के अधीन, उन्हें भर्त्सना देने के पश्चात या सदाचार की परिवीक्षा पर छोड़ने का पूर्ण विवेकाधिकार दिया गया है, वहीं 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह निषेधाज्ञा जारी की गई है कि वह उन्हें तब तक कारावास की सजा न दे, जब तक कि वह इस बात से संतुष्ट न हो जाए कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधियों का चरित्र शामिल है, को देखते हुए उनके साथ अधिनियम की धारा 3 और 4 के अंतर्गत व्यवहार करना वांछनीय नहीं है।"

27. इसके अतिरिक्त, माननीय उच्चतम न्यायालय ने वेद प्रकाश बनाम हरियाणा राज्य (1981) 1 SCC 447 : AIR 1981 SC 643 के मामले में, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 के साथ पठित दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 के अनुपालन के संबंध में पीठ और अधिवक्ताओं के कर्तव्य पर चर्चा करते हुए, निम्नानुसार अवलोकन किया है:-

“जिस अपराध के लिए दोषसिद्धि प्रदान की गई है, वह धारा 360 या कम से कम अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 के दायरे में आती है। हमारे समक्ष मौजूद सामग्री अपूर्ण है क्योंकि विचारण न्यायालय ने अपने दंडादेश संबंधी कार्यों के निर्वहन में लापरवाही दिखाई है। हमें इस बात पर बल देना चाहिए कि किसी अभियुक्त को सजा सुनाना विवेकाधिकार का एक संवेदनशील प्रयोग है, न कि केवल अंतर्ज्ञान पर आधारित कोई नियमित या यांत्रिक प्रक्रिया। विचारण

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

न्यायालय को उन परिस्थितियों में न्यायोचित दंड देने में सहायता के लिए आवश्यक सामग्री एकत्र करनी चाहिए थी। अपराधी की सामाजिक पृष्ठभूमि और व्यक्तिगत कारक अत्यंत प्रासंगिक होते हैं, हालांकि व्यवहार में आपराधिक न्यायालयों ने अपराधी के सामाजिक परिवेश या व्यक्तिगत परिस्थितियों पर शायद ही कभी ध्यान दिया है। भले ही दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 360 लागू न होती हो, फिर भी दंडादेश देने वाली न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह इतनी सक्रिय अवश्य हो कि उन तथ्यों को एकत्रित कर सके जिनका दंड पर पुनर्वास संबंधी प्रभाव पड़ता हो। वर्तमान मामले में ऐसी सामग्री के अभाव के कारण हमें अधिवक्ताओं से भी बहुत कम सहायता मिली है। वास्तव में, अधिवक्ताओं के सदस्य भी उन विधायी प्रावधानों पर पर्याप्त ध्यान नहीं देते हैं, जो एक अपराधी के साथ इस प्रकार व्यवहार करने से संबंधित हैं कि वह एक गैर-अपराधी बन जाए। हम इस बात पर बल देते हैं क्योंकि सजा में सुधार से संबंधित विधियों को लघु अधिनियम माना गया है और इसलिए, उन्हें कम महत्व का समझा जाता है। यह पूरी तरह से गलत दृष्टिकोण है और भले ही अधिवक्ता सहायता न करे, पीठ को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम जैसे अधिनियमों में निहित सजा देने के मानवीय उद्देश्य को अवश्य पूरा करना चाहिए।"

28. यह भी उल्लेखनीय है कि इस माननीय न्यायालय ने सुभाष चंद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य 2015 विधि वाद (All) 1343 के मामले में, परिवीक्षा की विधि को लागू करने और उपयुक्त मामलों में अभियुक्त व्यक्तियों को इस लाभकारी विधान का लाभ देने की आवश्यकता को

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पुरजोर तरीके से प्रतिपादित किया है। इस न्यायालय ने सभी विचारण न्यायालयों और अपीलीय न्यायालयों को निम्नवत निर्देश जारी किए हैं:-

"ऐसा प्रतीत होता है कि उपरोक्त लाभकारी विधान को ओझल कर दिया गया है और यहाँ तक कि न्यायाधीश भी व्यावहारिक रूप से विधि के इस प्रावधान को भूल गए हैं। अतः, इस मामले को समाप्त करने से पूर्व, यह न्यायालय महसूस करता है कि यदि विचारण न्यायालयों और अपीलीय न्यायालयों के लिए भर्त्सना के शब्द न लिखे गए, तो मैं अपने कर्तव्यों के निर्वहन में विफल रहूँगा। इस न्यायालय के महानिबंधक को निर्देशित किया जाता है कि वे इस निर्णय की प्रति उत्तर प्रदेश के सभी जिला न्यायाधीशों को प्रसारित करें, जो बदले में अपने अधीन कार्यरत सभी न्यायिक अधिकारियों के बीच इस आदेश की प्रति का प्रसार सुनिश्चित करेंगे और इस निर्णय का कड़ाई से अनुपालन सुनिश्चित करेंगे। राज्य के जिला न्यायाधीशों को यह भी निर्देशित किया जाता है कि वे ऐसे मामलों के निस्तारण वाले सभी न्यायालयों, अर्थात् विचारण न्यायालयों और अपीलीय न्यायालयों से हर महीने अखयाए मांगें और यह बताएं कि कितने मामलों में अभियुक्तों को उपरोक्त प्रावधानों का लाभ दिया गया है। जिला न्यायाधीशों को प्रत्येक मासिक बैठक में व्यक्तिगत रूप से ऐसे मामलों की निगरानी करने का भी निर्देश दिया जाता है। संबंधित जिला न्यायाधीश महानिबंधक को मासिक विवरण भेजेंगे कि विचारण न्यायालय/अपीलीय न्यायालय ने कितने मामलों में अभियुक्तों को उक्त लाभकारी विधान का लाभ प्रदान किया है। तत्काल अनुपालन हेतु इस आदेश की एक प्रति महानिबंधक के समक्ष रखी जाए।"

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

29. इसके अतिरिक्त, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **महाराष्ट्र राज्य बनाम जगमोहन सिंह कुलदीप सिंह आनंद (2004) 7 SCC 659** के मामले में, अपीलकर्ताओं को 'अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958' का लाभ प्रदान किया है, और निम्नानुसार अवलोकन किया है:-

"अभियुक्त की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन किया कि यह दुर्घटना वर्ष 1990 की है। दोनों पक्ष शिक्षित हैं और पढ़ोसी हैं। अतः, विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना की कि अभियुक्त को 'अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958' का लाभ प्रदान किया जाए। अभियुक्त की ओर से की गई यह प्रार्थना उचित प्रतीत होती है। घटना दस वर्ष से अधिक पुरानी है। विवाद पड़ोसियों के बीच नाली पर दावे जैसे एक मामूली मुद्दे को लेकर था। घटना आवेश में घटित हुई थी। सभी पक्ष शिक्षित हैं और दूर के रिश्तेदार भी हैं। यह घटना ऐसी नहीं है कि अभियुक्त को कारावास की सजा भुगतने का निर्देश दिया जाए। हमारी राय में, यह एक उपयुक्त मामला है जिसमें अभियुक्तों को एक वर्ष के लिए सदाचारी बने रहने का बंधपत्र निष्पादित करने का निर्देश देकर परिवीक्षा पर रिहा किया जाना चाहिए।"

30. **सीताराम पासवान और अन्य बनाम बिहार राज्य, AIR 2005 SC 3534** के मामले में अभियुक्तों/अपीलकर्ताओं को परिवीक्षा अधिनियम का लाभ देने की वांछनीयता के बिंदु पर आते हुए, उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार निर्धारित किया है:-

"विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए, न्यायालय को मामले की परिस्थितियों, अपराध की प्रकृति और अपराधी के चरित्र पर विचार करना होता है। अपराध की प्रकृति पर विचार करते समय, न्यायालय को अपराध की गंभीरता और पीड़ित पर पड़े उसके प्रभाव का एक यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत अभियुक्त को उपलब्ध लाभ, प्रावधानों में निहित सीमाओं के अधीन है और “हो सकता है” शब्द स्पष्ट रूप से इंगित करता है कि अपराधी को धारा 3 या 4 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग करते हुए रिहा करना है या नहीं, इसका विवेकाधिकार न्यायालय में निहित है, जो अपराध की प्रकृति, अपराधी के चरित्र और मामले की समग्र परिस्थितियों पर निर्भर करता है। अपराधी परिवीक्षा अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत शक्तियाँ न्यायालय में तब निहित होती हैं, जब कोई व्यक्ति ऐसे अपराध का दोषी पाया जाता है जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय नहीं है। इन शक्तियों का प्रयोग न्यायालय द्वारा व्यक्ति को दोषी पाते समय किया जा सकता है, और यदि न्यायालय को लगता है कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधी का चरित्र शामिल है, को देखते हुए अभियुक्त को लाभ दिया जाना चाहिए, तो इस शक्ति का प्रयोग अपीलीय या पुनरीक्षण चरण में भी किया जा सकता है, और भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अंतर्गत अपील की सुनवाई के दौरान इस न्यायालय द्वारा भी किया जा सकता है।”

31. यह भी उल्लेखनीय है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **मोहम्मद हाशिम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य**, AIR 2017 SC पृष्ठ 660 के मामले में, निम्नानुसार अवलोकन किया है:

“20-.....**रतन लाल बनाम पंजाब राज्य**, AIR 1965 SC 444 में, न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने बहुमत की ओर से बोलते हुए, इस प्रकार अपनी राय व्यक्त की थी:- यह अधिनियम दंडशास्त्र के क्षेत्र में सुधार की आधुनिक उदार प्रवृत्ति की प्रगति में एक मील का पत्थर है। यह उस सिद्धांत की मान्यता का परिणाम है कि आपराधिक विधि का उद्देश्य व्यक्तिगत अपराधी को दंडित करने की तुलना में उसमें सुधार

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

करना अधिक है। व्यापक रूप से कहा जाए तो, यह अधिनियम 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों और उससे अधिक आयु के अपराधियों, तथा उन अपराधियों जो मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध के दोषी हैं और वे जो कम गंभीर अपराध के दोषी हैं, के बीच अंतर करता है। जहाँ 21 वर्ष से अधिक आयु के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को अधिनियम के उपयुक्त प्रावधानों में निहित शर्तों के अधीन, उन्हें भर्त्सना के पश्चात या सदाचार की परीक्षा पर छोड़ने का पूर्ण विवेकाधिकार दिया गया है, वहीं 21 वर्ष से कम आयु के अपराधियों के मामले में, न्यायालय को यह निषेधाज्ञा जारी की गई है कि वह उन्हें तब तक कारावास की सजा न दे, जब तक कि वह इस बात से संतुष्ट न हो जाए कि मामले की परिस्थितियों, जिसमें अपराध की प्रकृति और अपराधियों का चरित्र शामिल है, को देखते हुए उनके साथ अधिनियम की धारा 3 और 4 के अंतर्गत व्यवहार करना वांछनीय नहीं है।"

32. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने जगत पाल सिंह एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य, AIR 2000 SC 3622 के मामले में, भारतीय दंड संहिता की धारा 323, 452, 506 के अंतर्गत अभियुक्त व्यक्तियों की दोषसिद्धि को बरकरार रखते हुए उन्हें परीक्षा का लाभ प्रदान किया है, और अभियुक्त व्यक्तियों को छह महीने की अवधि के लिए शांति और सदाचार बनाए रखने हेतु मजिस्ट्रेट के समक्ष बंधपत्र निष्पादित करने पर रिहा करने का आदेश भी दिया है।

33. यह उल्लेखनीय है कि घटना वर्ष 2001 की है। अभियुक्त-अपीलकर्ता पिछले 24 वर्षों से इस विधिक लड़ाई में उलझे हुए हैं, और इस मामले से पूर्व उनके विरुद्ध कोई भी आपराधिक पृष्ठभूमि दर्ज नहीं है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

34. मामले के तथ्यों और परिस्थितियों, तथा नल कूप को लेकर पारिवारिक विवाद से उत्पन्न विवाद की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय का यह मत है कि अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 का लाभ अभियुक्त-अपीलकर्ताओं को दिया जाना चाहिए।

35. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, अभियुक्त-अपीलकर्ताओं-मैकू लाल और बुद्धि लाल की भारतीय दंड संहिता की धारा 304/34 के अंतर्गत दोषसिद्धि को एतद्वारा निरस्त एवं अपास्त किया जाता है तथा उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 304/34 के आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। हालाँकि, भारतीय दंड संहिता की धारा 323/34, 504 और 506 के अंतर्गत दोषसिद्धि को बरकरार रखा जाता है, परंतु मैकू लाल और बुद्धि लाल की आयु, जो अब क्रमशः लगभग 56 और 43 वर्ष है, को देखते हुए सजा में संशोधन किया जाता है। आगे के न्यायिक कारावास को भुगतने के बजाय, अपीलकर्ताओं को अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 की धारा 4 का लाभ प्रदान किया जाता है। प्रत्येक अपीलकर्ता को संबंधित जिला परिवीक्षा अधिकारी के समक्ष 20,000/- रुपये की दो प्रतिभूतियां और व्यक्तिगत बंधपत्र दाखिल करने का निर्देश दिया जाता है। वे आज से दो वर्ष की अवधि के लिए शांति और सदाचार बनाए रखने का वचन पत्र देंगे। ये बंधपत्र इस निर्णय की तारीख से दो महीने के भीतर दाखिल किए जाने चाहिए।

36. यह निर्देश दिया जाता है कि अपीलकर्ता-मैकू लाल और बुद्धि लाल, आज से दो महीने के भीतर विचारण न्यायालय में कुल 5,000/- रुपये प्रत्येक जमा करेंगे। विचारण न्यायालय उक्त राशि को घायल/शिकायतकर्ता, श्रीमती परमेश्वरी के पक्ष में मुआवजे के रूप में जारी करेगा। यदि वह जीवित नहीं हैं, तो उक्त राशि उनके विधिक वारिसों के पक्ष में जारी की जाएगी।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



37. उपरोक्त शर्तों में से किसी भी शर्त के उल्लंघन या परिवीक्षा अवधि के दौरान शांति बनाए रखने में विफल रहने की स्थिति में, अपीलकर्ताओं को हिरासत में ले लिया जाएगा ताकि वे विचारण न्यायालय द्वारा सुनाई गई मूल सजा को भुगत सकें।
38. उपरोक्त संशोधन के साथ, वर्तमान दांडिक **अपील आंशिक** रूप से स्वीकृत की जाती है।
39. अनुपालन हेतु इस आदेश की एक प्रमाणित प्रति संबंधित न्यायालय को भी प्रेषित की जाए।
40. कार्यालय को निर्देशित किया जाता है कि आवश्यक अनुपालन हेतु इस आदेश की सूचना संबंधित न्यायालय को प्रेषित करे।
41. निचली न्यायालय का अभिलेख, यदि कोई हो, तो उसे भी संबंधित जिला न्यायालय को वापस भेज दिया जाए।

(न्यायमूर्ति प्रमोद कुमार श्रीवास्तव)

मार्च 30, 2026

हसीन यू.

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।